दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 09 मई, 2014

<u>नि.प्र.अ. (मू.प.) 72/2013 और सि.वि. 10341-42/2013</u>

पंकज बजाज **.....अपीलार्थी**

द्वारा: श्री मानव गुप्ता, अधिवक्ता

बनाम

मीनाक्षी शर्मा और अन्य **.....प्रत्यर्थीगण**

द्वारा: श्री एस. के. पाठक सह श्री अमित सिन्हा और श्री रोहित अग्रवाल, प्र-1 के लिए अधिवक्तागण।
श्री सुब्रत देब, दि.वि.प्रा./प्र-3 के लिए अधिवक्ता।

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति श्री एस. रवींद्र भट
माननीय न्यायमूर्ति श्री नजमी वज़ीरी

<u>श्री नजमी वज़ीरी</u>

1. यह अपील विद्वान एकल न्यायाधीश के 1 जुलाई, 2013 के आदेश ("**आक्षेपित आदेश**") को चुनौती देती है, जिसके अंतर्गत विद्वान एकल

न्यायाधीश ने अपीलार्थी के वाद, अर्थात् सि.वा. (मू.प.)/1114/2009 ("**वाद**") को खारिज कर दिया था, जिसमें (क) वादग्रस्त संपत्ति, अर्थात् ए-20, न्यू फ्रेंड्स कॉलोनी, नई दिल्ली से बेदखली के विरुद्ध शाश्वत व्यादेश और (ख) 2 मई, 2009 को उपराज्यपाल द्वारा उसी के बहाली आवंटन को अवैध करने की घोषणा करने की माँग की गई थी। हालाँकि, वाद को इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि वादी (यहाँ अपीलार्थी) के पास वादग्रस्त संपत्ति का कोई हक नहीं था। आक्षेपित आदेश में अन्य बातों के साथ-साथ यह भी टिप्पणी की गई कि चूँकि अपीलार्थी ने अपना मामला एक ऐसे दस्तावेज़ के आधार पर स्थापित किया था, जिससे उसे कोई हक प्राप्त नहीं हो सकता था, इसलिए वाद का कोई स्थान या वाद हेतुक नहीं था।

2. जिन परिस्थितियों में वाद दायर किया गया, उनका पता 13 नवंबर, 1959 को लगाया जा सकता है, जब भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 ("**अधिनियम**") की धारा 4 के अंतर्गत एक अधिसूचना, खिजराबाद, दिल्ली के गाँव की राजस्व संपदा में खसरा 60/3, 1 बीघा 17 बिस्वा में शामिल भूमि (वादग्रस्त संपत्ति सहित) के संबंध में जारी की गई थी। धारा 6 के अंतर्गत एक अधिसूचना 9 जनवरी, 1969 को जारी की गई थी और धारा 9 और 10 के अंतर्गत नोटिस भूमि-स्वामियों को 20 जून, 1971 को दिए गए थे। यह अर्जन प्रत्यर्थी सं. 5 ("**सोसायटी**") के लाभ के लिए होना था;

अर्जन की गई भूमि को स्वीकृत अभिन्यास योजना के अनुसार विकसित करने और उसके बाद अपने सदस्यों को उप-पट्टे पर देने के लिए 13 फ़रवरी, 1963 और 15 दिसंबर, 1964 के अनुबंधों के अंतर्गत सोसायटी को पट्टे पर दिया गया था (इसके पश्चात् सामूहिक रूप से "**पट्टा अनुबंध**" के रूप में संदर्भित)। खसरा सं. 60/3 के स्वामियों ने इस अर्जन को इस न्यायालय में रि.या. (सि.) 764/1971 ("**रिट याचिका**") में चुनौती दी। 12 जुलाई, 1971 को एक अंतरिम आदेश ने भूस्वामियों को बेदखली से बचाया। इस आदेश की पुष्टि 9 अगस्त, 1971 को की गई।

3. इस बीच, खसरा सं. 60/3 के अंतर्गत भूमि को चार भूखंडों में विभाजित किया गया, जिनकी संख्या ए-13, ए-14, ए-19 और ए-20 है; वादग्रस्त संपत्ति भूखंड ए-20 में शामिल भूमि है। अपीलकर्ता का मामला यह था कि उक्त चार भूखंडों में शामिल भूमि मूल भूस्वामियों/रिट याचीगण के कब्ज़े में थी। सोसायटी ने उक्त चार भूखंड अलग-अलग पक्षकारगण को आवंटित कर दिए, जो बाद में रिट याचिका में पक्षकारगण बन गए। भूखंड ए-13, ए-14 और ए-19 के आवंटियों ने मूल भूस्वामियों के साथ मतभेदों को सुलझा लिया और उक्त भूखंडों के संबंध में चुनौती 1987 और 1994 में वापस ले ली गई। अपीलार्थी का मामला है कि उक्त भूखंडों के संबंध में चुनौती वापस ले ली गई, क्योंकि समझौते के अंतर्गत आवंटियों ने भूखंडों के स्वामियों को प्रतिकर दिया था, न कि प्रत्यर्थी सं. 3 (दि.वि.प्रा.) को।

4. हालाँकि, अर्जन को चुनौती, वादग्रस्त संपत्ति में मूल भूस्वामियों के हित की सीमित सीमा तक बनी रही। यह चुनौती भी 2005 में समाप्त हो गई, जब एक समझौता आवेदन दायर किया गया और रिट याचिका वापस ले ली गई। रिट याचिका का निपटान करने वाले 19 अप्रैल, 2005 के आदेश में अन्य बातों के साथ-साथ यह भी दर्ज किया गया कि वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा पहले ही सोसायटी को सौंप दिया गया है और अर्जन की कार्यवाही की वैधता के बारे में कोई विवाद नहीं है। अपीलार्थी का प्रतिवाद है कि समझौता केवल सोसायटी द्वारा मूल भूस्वामी को अपीलार्थी द्वारा दिए गए धन का उपयोग करके भुगतान करने के परिणामस्वरूप हुआ - प्रत्यर्थी सं. 1 को दी गई किसी भी राशि से नहीं; जिस तथ्य को बाद वाले ने स्वीकार किया है।

5. ए-20 श्री आर.डी. शर्मा को आवंटित किया था, जिसके माध्यम से प्रत्यर्थी सं. 1 दावा करना चाहता है, श्री आर.डी. शर्मा को आवंटन उप-पट्टे की शर्तों का पालन न करने के कारण 2001 में रद्द / वापस ले लिया गया था, और कुछ शुल्कों के भुगतान के अधीन, आवंटन 2009 में बहाल कर दिया गया था। श्री आर.डी. शर्मा के पक्ष में न तो आवंटन और न ही पुनर्स्थापन विवादित है, सिवाय इसके कि याचिकाकर्ता ने ऐसा करने के लिए उपराज्यपाल/दि.वि.प्रा. की शक्तियों पर प्रश्न उठाया है। अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी सं. 1 के साथ वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में अन्य कार्यवाहियाँ की

हैं, जो वर्तमान विवाद से संबंधित नहीं हैं; वह मूल भूस्वामी के साथ समझौते और 2007 में सोसायटी द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर वादग्रस्त संपत्ति पर स्वामित्व का दावा करता है। वह वाद में पारित अंतरिम आदेश के आधार पर 2009 से संपत्ति का अधिभोग कर रहे हैं।

6. उसने प्रतिवाद दिया कि जब वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा 2005 तक नहीं लिया गया था, तो अर्जन को पूर्ण नहीं माना जा सकता और न ही सोसायटी को अर्जन के अंतर्गत कब्ज़ा प्राप्त हुआ है; कि सोसायटी का संपत्ति पर कब्ज़ा और स्वामित्व अर्जन या पट्टा अनुबंधों से नहीं बल्कि 2005 में विवादों के निपटारे से प्राप्त हुआ है, जो बदले में अपीलार्थी द्वारा भुगतान की गई धनराशि के आधार पर था; कि उसे सोसायटी द्वारा उसके पक्ष में निष्पादित 2007 के अनुबंध से उसका स्वामित्व प्राप्त हुआ है।

7. अपीलार्थी ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी सं. 1, प्रत्यर्थी सं. 3 और 4 के साथ मिलीभगत और षड्यंत्र करके 2009 में आवंटन की बहाली के माध्यम से वादग्रस्त संपत्ति पर उसके स्वामित्व और कब्ज़े को अवैध रूप से और प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने का प्रयास कर रहा था; उसने ज़ोर देकर कहा कि बहाली 2007 में विक्रय के काफ़ी बाद की गई थी। इस प्रकार उसने (क) प्रत्यर्थी सं. 1 और 3 के विरुद्ध अपीलार्थी को बेदखल

करने से शाश्वत व्यादेश; (ख) प्रत्यर्थी सं. 3 को वादग्रस्त संपत्ति में प्रवेश करने से रोका जाना; (ग) प्रत्यर्थी सं. 4 को वादग्रस्त संपत्ति पर कब्ज़ा लेने में प्रत्यर्थी सं. 1 की सहायता करने से रोका जाना; (घ) यह घोषणा की जानी कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा की गई बहाली अवैध और विधि-विरुद्ध है; (ङ) यह घोषणा की जानी कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा दिया गया उप-पट्टा अवैध, विधि-विरुद्ध और निष्क्रिय है; और (च) ऐसे ही अन्य और आगे के आदेश, जुर्मानों सहित माँगे।

8. प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 ("संहिता") की पहली अनुसूची के आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत वाद में एक आवेदन दायर किया गया था, जिसके अनुसार आक्षेपित आदेश पारित किया गया था। आवेदन में यह प्रतिवाद दिया गया कि वादपत्र को अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए क्योंकि इसमें कोई वाद हेतुक नहीं बताया गया है।

9. विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष प्रत्यर्थी सं. 1 और 3 का मामला यह था कि वाद संधार्य नहीं था, क्योंकि अपीलार्थी के पास कोई सुने जाने का अधिकार नहीं था; चूँकि सोसायटी 2007 के विक्रय विलेख को निष्पादित करने में सक्षम नहीं थी, इसलिए अपीलार्थी के पास संपत्ति में कोई अधिकार, शीर्षक या हित नहीं होगा। इसे प्रदर्शित करने के लिए, उन्होंने भारत के राष्ट्रपति के साथ सोसायटी के पट्टा अनुबंधों के उपबंधों का सहारा लिया, जिसके अंतर्गत सोसायटी को केवल वादग्रस्त संपत्ति को उप-

पट्टे पर देने का अधिकार दिया गया था, न कि उसे अन्यसंक्रांत करने का। इस बात पर ज़ोर दिया गया कि सोसायटी को वादग्रस्त संपत्ति बेचने से प्रतिबंधित किया गया है। उन्होंने रिट याचिका का निपटान करने वाले दिनांक 19 अप्रैल, 2005 के आदेश पर भी भरोसा किया, ताकि यह प्रदर्शित किया जा सके कि मूल भूस्वामियों की यह स्वीकार्य स्थिति है कि अर्जन कार्यवाही की वैधता को कोई चुनौती नहीं दी गई है तथा वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा पहले ही सोसायटी को सौंप दिया गया है।

10. अपीलार्थी ने 2007 के विक्रय विलेख को निष्पादित करने के लिए सोसायटी के अधिकार का प्राख्यान दिया; कि वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा मूल भूस्वामियों के साथ समझौते के अनुसार तथा 19 अप्रैल, 2005 को रिट याचिका वापस लेने के पश्चात अंतरित किया गया था; कि समझौते के अनुसार, यह सोसायटी थी न कि दि.वि.प्रा. जिसने भूमि का हित और कब्ज़ा प्राप्त किया था; कि दि.वि.प्रा. ने कभी भी वादग्रस्त संपत्ति का हक या हित प्राप्त नहीं किया था क्योंकि अर्जन के पश्चात कभी भी कब्ज़ा नहीं लिया गया था; कि इस प्रकार सोसायटी अपीलार्थी के पक्ष में 2007 का विक्रय विलेख निष्पादित करने की हकदार थी। इस प्रतिविरोध को पुष्ट करने के लिए अपीलार्थी ने सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अंतर्गत डीडीए से पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर पर भरोसा किया, जिसमें कहा गया था कि 2005 तक, अर्जन के अंतर्गत या अन्यथा कब्ज़ा नहीं

लिया गया था। आगे यह तर्क दिया गया कि किसी भी मामले में, एक विचारणीय मुद्दा यह उठा कि क्या सोसायटी ने अर्जन के अनुसरण में या (जैसा कि अपीलार्थी द्वारा अभिवचन दिया गया है) 19 अप्रैल, 2005 के आदेश में परिणत समझौते के अनुसरण में वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा प्राप्त किया। अंत में यह तर्क दिया गया कि चूँकि अपीलार्थी के पास वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा है, इसलिए उसमें छेड़छाड़ नहीं की जानी चाहिए।

11. विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थीगण के प्रतिविरोधों से सहमति जताई, क्योंकि विद्वान एकल न्यायाधीश की राय में, वादपत्र और उसके साथ दायर दस्तावेज़ों से यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी के पास कोई सुने जाने का अधिकार नहीं है और न ही वादपत्र में कोई वाद हेतुक पाया गया है। इसलिए उन्होंने वाद खारिज कर दिया। उन्होंने तर्क दिया:

11.1. अर्जन के अंतर्गत सभी भूमियों का हित और कब्ज़ा पट्टा अनुबंधों के अनुसार सोसायटी को अंतरित कर दिया गया।

11.2. यह अकल्पनीय है कि 19 अप्रैल, 2005 के आदेश के अनुसार केवल वादग्रस्त संपत्ति का हित और कब्ज़ा सोसायटी को कैसे अंतरित हो जाएगा।

11.3. किसी भी मामले में, रिट याचिका वापस लेने के लिए दायर किए गए समझौता आवेदन में भी यह स्वीकार किया गया था कि

पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत वादग्रस्त संपत्ति में हिस्सेदारी सोसायटी को अंतरित हो गई थी। अपीलार्थी द्वारा जिस विक्रय विलेख पर भरोसा करने की माँग की गई है, उसमें सोसायटी ने भी यही स्वीकार किया है।

11.4. एक बार जब यह अभिनिर्धारित कर लिया जाता है कि सोसायटी को भूमि पर अपना हित केवल पट्टा अनुबंधों के अनुसार प्राप्त होता है, तो भूमि के संबंध में सोसायटी के आगे के सभी कार्य पट्टा अनुबंधों की शर्तों के अधीन होंगे।

11.5. पट्टा अनुबंधों में सोसायटी द्वारा भूमि के किसी भी विक्रय पर स्पष्ट रूप से प्रतिबंध लगाया गया है तथा केवल उप-पट्टे के माध्यम से अंतरण की अनुमति दी गई है, जो कि इस मामले में नहीं किया गया।

11.6. इस प्रकार, वादपत्र के साथ दायर दस्तावेज़ों से यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी के पास वाद दायर करने के लिए न तो कोई अधिकार है और न ही कोई वाद हेतुक है, क्योंकि अपीलार्थी को सोसायटी से वादग्रस्त संपत्ति पर कोई हक प्राप्त नहीं हो सकता था।

11.7. जब अपीलार्थी के पूर्ववर्ती हितधारक अर्थात् सोसायटी द्वारा - 19 अप्रैल, 2005 के आदेश और साथ ही विक्रय विलेख जिस पर अपीलार्थी भरोसा करता है - दोनों में यह स्वीकार किया गया

है कि कब्ज़ा पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत प्राप्त किया गया था, तो इस बारे में कोई विचारणीय मुद्दा नहीं उठता कि कब कब्ज़ा वास्तव में अंतरित किया गया था। इसके लिए पक्षकारगण को विचारण में नहीं भेजा जाना चाहिए।

11.8. अपीलार्थी का यह मामला कि वह संपत्ति पर कब्ज़ा रखता है और इसलिए वह किसी भी तरह की छेड़छाड़ से बचाने के लिए आदेश पाने का हकदार है, अभिवचनों पर आधारित नहीं है। किसी पक्ष को ऐसा मामला बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती, जिसके बारे में विशेष रूप से अभिवचन नहीं दिया गया हो। अपीलार्थी ने 2007 के विक्रय विलेख के आधार पर वाद में मामला बनाया है और अब कब्ज़े के आधार पर राहत नहीं माँग सकता।

12. अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री टिकू ने प्रतिवाद दिया कि आक्षेपित आदेश में इस बात को ध्यान में नहीं रखा गया कि विवादित संपत्ति का कब्ज़ा सोसायटी को 19 अप्रैल, 2005 के आदेश के अनुसरण में या किसी भी मामले में उसके बाद ही मिला था। उन्होंने अपने आरटीआई आवेदन पर दि.वि.प्रा. के उत्तर पर विशेष भरोसा जताया। उन्होंने आगे प्रतिवाद दिया कि संपत्ति प्रत्यर्थी सं. 1 के पूर्ववर्ती हितधारी को आवंटित नहीं की जा सकती थी, जब संपत्ति का कब्ज़ा कभी लिया ही नहीं गया था

और अर्जन प्रक्रिया भी पूरी नहीं हुई थी। उन्होंने आगे इस बात पर ज़ोर दिया कि प्रत्यर्थी सं. 1 ने सोसायटी से वादग्रस्त संपत्ति में कोई हित अर्जित या प्राप्त नहीं किया हो सकता, क्योंकि सोसायटी का 19 अप्रैल, 2005 से पहले कोई हित नहीं था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि किसी भी मामले में, दि.वि.प्रा. को वादग्रस्त संपत्ति में कोई अधिकार, हक या हित प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि अर्जन के बाद संपत्ति का कब्ज़ा कभी नहीं लिया गया।

13. यह भी प्रस्तुत किया गया कि सोसायटी ने अपीलार्थी को वादग्रस्त संपत्ति केवल इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अंतरित की कि अपीलार्थी ने अपने पूर्ववर्ती/मूल भूस्वामियों के साथ विवादों का निपटारा कर लिया था (जिस निपटारे का समापन 19 अप्रैल, 2005 के आदेश में हुआ)। उन्होंने तर्क दिया कि यह अन्य भूखंडों (ए-13, ए-14 और ए-19) के संबंध में आवंटियों द्वारा मूल भूस्वामियों के साथ समान विवादों के समाधान के परिणाम के अनुरूप था।

14. उन्होंने प्रतिवाद दिया कि आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत एक आवेदन में केवल वादपत्र में दिए गए कथनों के आधार पर निर्णय लिया जाना चाहिए। उन्होंने प्रतिवाद दिया कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने गलत ढंग से यह मानकर आगे बढ़े हैं कि वादग्रस्त परिसर का कब्ज़ा अर्जन के अनुसरण में लिया गया था, बिना अपीलार्थी को अपना मामला साबित

करने का अवसर दिए। यह प्रतिवाद दिया गया कि आदेश VII नियम 11 का एकमात्र आदेश वादपत्र को अस्वीकार करना था, यदि वादपत्र को पढ़ने पर यह स्पष्ट हो कि कोई वाद हेतुक नहीं बताया गया है। उन्होंने आगे प्रतिवाद दिया कि एक बार वादपत्र से यह देखा जाता है कि एक उचित मामला बनाया गया है, तो अपीलार्थी को वाद में अपना मामला साबित करने का अवसर दिया जाना चाहिए था। उन्होंने प्रतिवाद दिया कि आक्षेपित आदेश ने अपीलार्थी पर बहुत अधिक प्रतिकूल प्रभाव डाला है, जो अब उपचारहीन है।

15. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से प्रस्तुत वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नीरज किशन कौल ने प्रतिवाद दिया कि आक्षेपित आदेश में कोई दोष नहीं है। उन्होंने प्रतिवाद दिया कि वादपत्र के साथ दायर किए गए दस्तावेज़ों से यह स्पष्ट है कि वादग्रस्त संपत्ति अर्जन के अनुसार और पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत सोसायटी को दी गई थी। उन्होंने प्रतिवाद दिया कि एक बार जब यह देखा जाता है कि सोसायटी ने पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत वादग्रस्त संपत्ति में हित प्राप्त किया है, तो यह एक तार्किक अनुक्रम है कि सोसायटी इसकी शर्तों से बंधी होगी - जिसमें विक्रय पर प्रतिबंध भी शामिल है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इन परिस्थितियों में, सोसायटी से अपीलार्थी को कोई हक नहीं मिल सकता था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि जहाँ वादपत्र में ही कोई वाद हेतुक नहीं बताया गया है, वहाँ वाद को

खारिज कर दिया जाना चाहिए और ऐसा करने में विद्वान एकल न्यायाधीश की कार्रवाई में कोई दोष नहीं था।

16. संहिता के आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत किसी मामले पर विचार करने वाले न्यायाधीश को यह ध्यान में रखना चाहिए कि विचारणीय मुद्दा यह नहीं है कि वादी के पास वाद दायर करने के लिए वाद हेतुक है या नहीं, बल्कि यह है कि क्या वाद में कोई वाद हेतुक बताया गया है। आदेश VII नियम 11 के उपबंध के पीछे की लोक नीति उच्चतम न्यायालय के *टी. अरिवानंदम बनाम टी.वी. सत्यपाल और अन्य* के निर्णय में पाई जा सकती है, जिसमें अभिनिर्धारित किया गया था कि *यदि वाद को औपचारिक नहीं, किंतु, अर्थपूर्ण ढंग से पढ़ने पर यह पता चले कि यह स्पष्ट रूप से तंग करने वाला और गुणागुण रहित है, और वाद हेतुक नहीं बताता है,* तो आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

17. *लिवरपूल एंड लंदन एस. पी. और आई. एसोसिएशन लिमिटेड बनाम एम. वी. सी सक्सेस आई. और अन्य* में उच्चतम न्यायालय ने टिप्पणी की कि:

> ***"139.*** *वादपत्र में वाद हेतुक बताया गया है या नहीं, यह अनिवार्य रूप से तथ्य का प्रश्न है। लेकिन वादपत्र में वाद हेतुक बताया गया है या नहीं, इसका पता वादपत्र को पढ़कर ही लगाया जाना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए वादपत्र में दिए गए प्रकथनों*

को पूरी तरह से सही माना जाना चाहिए। परीक्षण यह है कि यदि वादपत्र में दिए गए प्रकथनों को पूरी तरह से सही माना जाए, तो क्या डिक्री पारित की जाएगी।

*****

152. *जब तक दावा किसी वाद हेतुक का प्रकटीकरण करता है या न्यायाधीश द्वारा तय किए जाने योग्य कुछ प्रश्न उठाता है, तब तक केवल यह तथ्य कि मामला कमज़ोर है और सफल होने की संभावना नहीं है, उसे खारिज करने का कोई आधार नहीं है। वाद हेतुक का प्रकटीकरण करने में अभिवचनों की कथित विफलता पूर्ण विवरणों की अनुपस्थिति से अलग है। (मोहन रावले [(1994) 2 एससीसी 392] देखें।)"*

18. इस वाद पर उपरोक्त उद्घोषणाओं के आलोक में भी विचार किया जाना चाहिए। वाद में अपीलार्थी का मामला यह है कि वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा अर्जन के बाद कभी नहीं लिया गया। वादपत्र में, अन्य बातों के साथ-साथ यह भी प्रकथन किया गया है:

18.1. अर्जन की कार्यवाही 1971 से 2005 तक रूकी रही।

18.2. भूखंड ए-13, ए-14 और ए-19 में शामिल भूमि से संबंधित विवादों का निपटारा उनके मूल स्वामियों और भूखंडों के आवंटियों के बीच किया गया।

18.3. भूखंड ए-13, ए-14 और ए-19 में शामिल भूमि के मूल स्वामियों ने आवंटियों के साथ समझौते को ध्यान में रखते हुए अर्जन संबंधी विवाद वापस ले लिया।

18.4. इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका केवल वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में थी।

18.5. यहाँ तक कि इस सीमित सीमा तक की चुनौती का निपटारा भी मूल स्वामियों और सोसायटी के बीच हो गया था और रिट याचिका 2005 में वापस ले ली गई थी।

18.6. समझौते के अनुसार, वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा सोसायटी को दे दिया गया तथा सहमति आदेश के आधार पर वापसी कर दी गई।

18.7. इसके बाद सोसायटी ने अपीलार्थी को संपत्ति बेच दी और उसे उस पर कब्ज़ा दे दिया, जिसे अब प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा अन्य प्रत्यर्थीगण के साथ मिलीभगत और षड्यंत्र के अंतर्गत छीनने का प्रयास किया जा रहा है।

19. वादपत्र में प्रतिवाद दिया गया है कि पहले प्रत्यर्थीगण प्रत्यर्थी सं. 1 के पूर्ववर्ती हितधारी को किए गए आवंटन के संबंध में विभिन्न कार्यवाहियों में शामिल रहे हैं (जिसे 2001 में रद्द कर दिया गया था और 2009 में बहाल कर दिया गया था); इसने यह मामला बनाने का प्रयास किया कि

प्रत्यर्थी सं. 1 के पास सोसाइटी द्वारा अपीलार्थी को विक्रय के समय वादग्रस्त संपत्ति में न तो अधिकार है, न ही शीर्षक, न ही हित; प्रत्यर्थीगण ने अपीलार्थी को वादग्रस्त संपत्ति से बेदखल करने और अवैध रूप से उस पर कब्ज़ा करने के लिए मिलीभगत की है। वादपत्र के साथ, अपीलार्थी के मामले के समर्थन में कई दस्तावेज़ दायर किए गए थे।

20. अपीलार्थी ने विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष तथा इस न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया है कि प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा अर्जन कार्यवाही के अंतर्गत कभी भी कब्ज़ा नहीं लिया गया। अपीलार्थी ने उपरोक्त प्रकथनों के आधार पर मामला स्थापित करने की माँग की है कि कब्ज़ा मूल स्वामियों द्वारा सीधे सोसायटी को अंतरित किया गया था। यह भी प्रतिवाद दिया गया है कि कब्ज़े का यह अंतरण भी मूल स्वामियों और सोसायटी के बीच समझौते के अनुसरण में है।

21. आगे यह प्रतिवाद दिया गया है कि वादग्रस्त संपत्ति का निपटारा भी सोसायटी द्वारा अपीलार्थी द्वारा दिए गए धन का उपयोग करके किया गया था और इस प्रकार सोसायटी ने वादग्रस्त संपत्ति अपीलार्थी को अंतरित कर दी। यद्यपि प्रत्यर्थी सं. 1 ने विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष वादग्रस्त संपत्ति पर अपने हक/हित के संबंध में व्यापक प्रस्तुतियाँ दी हैं, तथापि वे संहिता के आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत आवेदन पर निर्णय लेने के लिए प्रासंगिक नहीं हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया

है, आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत आवेदन पर विचार करने के लिए एकमात्र प्रासंगिक सामग्री वादपत्र में दिए गए प्रकथन - जिन्हें समग्र रूप से पढ़ा जाए - और उसके साथ दायर दस्तावेज़ हैं।

22. इस न्यायालय का मानना है कि वादपत्र में दिए गए प्रकथन और उसके साथ दायर किए गए दस्तावेज़, वाद हेतुक प्रकट करते हैं। अपीलार्थी का मामला यह है कि वादग्रस्त संपत्ति का कब्ज़ा कभी भी अनुबंध के अनुसरण में नहीं लिया गया था और सोसायटी ने मूल स्वामियों से समझौते के अनुसरण में उसमें हक, कब्ज़ा और/या हित प्राप्त किया है, न कि अर्जन के अनुसरण में। इस प्रकार अपीलार्थी अपना हक स्थापित करना चाहता है। इसे भ्रामक वाद हेतुक बनाने के लिए चतुराई या धूर्ततापूर्ण मसौदा तैयार करने का मामला नहीं कहा जा सकता है, जिसे आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत शुरू में ही समाप्त कर दिया जाना चाहिए। आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत न्यायालय का कर्तव्य यह विचार करना है कि क्या वादपत्र में दिए गए प्रकथनों को समग्र रूप से लिया जाए, साथ ही उसके साथ दायर किए गए दस्तावेज़ों को, यदि सत्य माना जाए, तो वादी के पक्ष में डिक्री की गारंटी होगी। इस न्यायालय का मानना है कि इस मामले में प्रकथन और दस्तावेज़ ऐसा करेंगे।

23. इस न्यायालय की राय में विद्वान एकल न्यायाधीश ने 2007 के अनुबंध में वर्णित बातों और रिट याचिका में दायर समझौता आवेदन की विषय-

वस्तु पर अनुचित भरोसा करके त्रुटि की है। यह निर्विवाद है कि यदि सोसायटी ने अर्जन के अनुसार और पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत वादग्रस्त संपत्ति में हक/हित प्राप्त किया होता, तो वह विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए सक्षम नहीं होती। हालाँकि, यह वाद में अपीलार्थी द्वारा स्थापित मामला नहीं है। अपीलार्थी का मामला यह रहा है कि मूल स्वामियों के साथ समझौते के अनुसार सोसायटी को कब्ज़ा सौंप दिया गया था। इसलिए, अपीलार्थी को विचारण में अपना मामला साबित करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

24. हालाँकि, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी को ऐसा प्रतिवाद करने से रोका गया है और वह उक्त मुद्दों के संबंध में विचारण की माँग नहीं कर सकता। उन्होंने यह बात (क) समझौता आवेदन में दी गई स्वीकृति (इस आशय से कि सोसायटी अर्जन और पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत वादग्रस्त संपत्ति पर हक प्राप्त करती है), (ख) 2007 के अनुबंध के विवरण (जिसमें कहा गया है कि सोसायटी पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत वादग्रस्त संपत्ति पर हक प्राप्त करती है), (ग) इस न्यायालय द्वारा *नागिन चंद गोधा बनाम भारत संघ*, और *राजबीर सोलंकी, डॉ. बनाम भारत संघ* में प्रतिपादित विधि के आधार पर अभिनिर्धारित की है कि जब तक अभिलेख से पता चलता है कि कब्ज़ा ले लिया गया है,

कलेक्टर को वास्तविक भौतिक कब्ज़ा साबित करने की आवश्यकता नहीं है।

25. इस न्यायालय की राय में, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अपनाई गई उपरोक्त कार्यवाही आदेश VII नियम 11 के अतर्गत आवेदन पर उचित नहीं होगी। जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने *लिवरपूल और लंदन एस.पी. एंड आई एसोसिएशन लिमिटेड बनाम एम.वी. सी सक्सेस आई और अन्य* में टिप्पणी की थी, *यह पता लगाने के लिए कि क्या वाद में वाद हेतुक दर्शाया गया है, न्यायालय को विधि या तथ्य के संदिग्ध या जटिल प्रश्नों पर विस्तृत जाँच करने की आवश्यकता नहीं है। कानून के अनुसार न्यायालय का अधिकार क्षेत्र यह पता लगाने तक सीमित है कि आरोपों पर कोई वाद हेतुक दर्शाया गया है या नहीं।* यद्यपि उक्त दस्तावेज़ों में कुछ ऐसी सामग्री हो सकती है जो अपीलार्थी के मामले के अनुरूप न हो, फिर भी यह आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत शिकायत को खारिज करने का आधार नहीं होगा। स्पष्ट विरोधाभास के बावजूद, अर्थात् अभिलेख से स्पष्ट रूप से ज्ञात, किसी लंबी या जटिल बहस या तर्क की लंबी प्रक्रिया के बिना, प्रकथनों और दस्तावेज़ों के बीच, आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय को वादपत्र में दिए गए प्रकथन को हल्के में नहीं लेना चाहिए।

26. इस न्यायालय के ऊपर उल्लिखित निर्णय एक अलग संदर्भ में दिए गए थे। *नागिन चंद गोधा बनाम भारत संघ* मामले में न्यायालय को ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ा, जहाँ पंचनामा निष्पादित करके प्रतीकात्मक कब्ज़ा लिया गया था और उसके बाद तत्कालीन स्वामी ने दावा किया कि चूँकि वह अभी भी उस पर काबिज़ है, इसलिए भूमि को अधिसूचित किया जाना चाहिए। उक्त परिस्थितियों में, न्यायालय ने टिप्पणी की कि एक बार प्रतीकात्मक कब्ज़ा ले लेने और अभिलेख से दिखाने के बाद भूमि संघ में निहित हो जाती है। *राजबीर सोलंकी, डॉ. बनाम भारत संघ* मामले में न्यायालय का निष्कर्ष भी ऐसा ही था, जहाँ प्रतीकात्मक कब्ज़ा सात साल पहले लिया गया था - बेशक ऐसा ही था - लेकिन इस आधार पर अधिसूचना रद्द करने की माँग की गई थी कि याचिकाकर्ता के पास वास्तविक कब्ज़ा था।

27. वर्तमान मामले में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए केवल जिन अभिलेखों पर भरोसा किया कि कब्ज़ा ले लिया गया था, वे (क) रिट याचिका में दायर समझौता आवेदन में पूर्वोक्त पावती और (ख) 2007 के समझौते में उल्लेख थे। निस्संदेह, वादपत्र के साथ कोई पंचनामा दाखिल नहीं किया गया है जिससे यह पता चले कि प्रतीकात्मक कब्ज़ा लिया गया था। न ही ऐसी कोई सामग्री है जो यह इंगित करती हो कि कलेक्टर द्वारा कोई प्रत्यक्ष कार्य किया गया है जिससे यह संकेत मिले

कि कब्ज़ा ले लिया गया है, जैसा कि इस न्यायालय के पूर्वोक्त दो निर्णयों में मामला था।

28. इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का विचार है कि विद्वान एकल न्यायाधीश का यह निष्कर्ष कि सोसायटी ने पट्टा अनुबंधों के अंतर्गत वाद संपत्ति में स्वामित्व / हित अर्जित किया है, आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत एक आवेदन पर विचार करने के चरण में अनुचित है। वादपत्र में वाद हेतुक प्रकट किया गया है जिस पर विचारण के दौरान विचार किया जाना चाहिए। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाता है; पक्षकारगण को निर्देश दिया जाता है कि वे वाद में आगे की कार्यवाही के लिए निर्देश हेतु रोस्टर आवंटन के अनुसार 20 मई, 2014 को संबंधित एकल न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित हों। यथास्थिति संधार्य रखी जाए।

29. अपील को उपरोक्त शर्तों के साथ, बिना किसी जुर्माने के आदेश के स्वीकार किया जाता है।

नजमी वज़ीरी
(न्यायाधीश)

एस. रवींद्र भट
(न्यायाधीश)

09 मई, 2014

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*